ISSN 2395-051X

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य में वर्ग संघर्ष

डॉ. सरिता जैन
सहा. प्राध्यापक - हिन्दी
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर, उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश-

हरिशंकर परसाई जी हिंदी के महत्वपूर्ण व्यंग्यकार हैं। व्यंग्य के माध्यम से उनका अभ्युदय हुआ। अपनी संवेदना और शिल्प के कारण वे स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के हिंदी व्यंग्य साहित्य के प्रथम कोटि के लेखक के रूप में परिणित किए जाने लगे। उन्होंने व्यंग्य के माध्यम से उच्च कोटि का लेखन कार्य किया। जिसमें बाह्य जगत की यथार्थ परिवर्तनशीलता के साथ मानवीय और साहित्य की दिशा-दशा बदलती है तथा साहित्य इस सामाजिक परिवर्तन का समुचित सम्वाहक होता है। निम्न मध्य वर्ग का जीवन परसाई जी के साहित्य का प्रमुख क्षेत्र है।

मुख्य शब्द - बिजबिजाता, संवेदना, विकृति, आध्यात्म

परसाई का व्यक्तित्व जीवनगत संघर्षो से बना है, उन्होनें अपने भीतर और बाहर के व्यक्तित्व को अलग-अलग नहीं रखा है। उनकी स्वयं की लेखनी ने ही उनके भोगे हुए यथार्थ की तस्वीर प्रस्तुत की है। परसाई जी ने कबीर की तरह इस संसार को देखा है उनका पूरा व्यक्तित्व तेज-तर्रार है वे समाज की रचना एवं उसके विकास क्रम को कार्ल मार्क्स की वैज्ञानिक दृष्टि से देखते हैं इसी दृष्टि से व्यक्ति या घटना को पढ़कर एक ऐसा सर्वमान्य ताना बाना बुनते हैं कि उसमें पूरी समाजिक व्यवस्था और सभ्यता का ढोंग उजागर हो जाता है। इस तरह परसाई जी एक कबीरपंथी मानस लेकर हमलावर अंदाज में निर्मम प्रहार करते हैं उनके पास वही पलीता है, जो वे कबीर के पास देखते थे, और जिनसे कबीर अपने समय की कुरूतियों को आग लगाते फिरते थे।

''हरिशंकर परसाई के व्यंग्य का केंद्र बिंदु उनकी यथार्थ को आरपार देखने वाली दृष्टि है जो ''मनुष्य और समाज का एक आदर्श सामने रखकर चलाती है। परसाई के व्यंग्यो में सर्वत्र आज के बिगड़े हुए मनुष्य और विसंगत समाज का तिरस्कार, व्यंग्य, उपहास, प्रताड़ना है। उन्हें कहीं भी कोई संगीत, सामंजस्य, समता, बंधुत्व और सार्थकता नजर नहीं आती। हरिशंकर परसाई उन व्यंग्य लेखकों में है जिनके पास एक सार्थक आलोचनात्मक दृष्टि है। इसी दृष्टि के पक्ष में उनकी मान्यता है व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार और पाखंडों का पर्दाफाश करता है।''[1]

''नैतिक संवेदना से शून्य सामाजिक ढांचे में स्वार्थ परक काम चलाउ व्यंग्य को निम्न टिप्पणी में लक्ष्य करते हुए परसाई जी कहते हैं- ''अच्छी आत्मा फोल्डिंग कुर्सी की तरह होनी चाहिए जरूरत पड़ी तभी फैलाकर उस पर बैठे गए, नहीं तो मोड़कर कोने में टिका दिया।''[2]

परसाई के व्यंग्य सामाजिक यथार्थ से संवंधित हैं यह यथार्थ कहीं भी अमूर्त नहीं है, मूर्त और वास्तविक

है। उनमें रोज पे रोज के जीवन के कष्टों, आडम्बरों और अनीतियों का उपहास है, जो लेखक की दूरगामी दृष्टि के कारण पाठक को झकझोरता है, कि वह सोचे कि उस अन्तहीन यातना का कारण क्या है? परसाई के व्यंग्य की चोट दुष्ट और भ्रष्ट समाज व्यवस्था को नकार कर उनकी जगह मानवीय समाज की स्थापना से संबंधित है। परसाई जी ने भारतीय समाज की वर्ग विसंगतियों को पहचाना है। उसे अपने लेखन में खोल-खोल कर उजागर किया है। खूब उघारा है तथा उनके मर्म स्तरों पर चोटे की है। परसाई जी ने मुख्य रूप से पूंजीवादी सामाजिक संबंधों की जटिलता को अपने व्यंग्य में उतारा है। उन्होंने पूंजीवादी राजनीति के ह्रास् का विश्लेषण किया है। परसाई जी ने अपने हर व्यंग्य में लड़ाई लड़ी है। वे व्यक्ति, समाज और समूचे राष्ट्र के भीतरी कक्षाओं में घुसते हैं और गुथी हुई विसंगतियों और विडम्बनाओं को सामने लाते हैं। परसाई वर्तमान की सड़ी- गली और बिजविजाती सामाजिक व्यवस्था का घोर विरोध करते हैं।

''मौसम की महेरबानी पर भरोसा करेगें, तो शीत से निपटते-निपटते लू तंग करने लगेगी। मौसम के इंतजार से कुछ नहीं होगा। बसंत अपने आप नहीं आता, उसे लाया जाता है। सहज आने वाला तो पतझड़ होता है।, वसंत नहीं। अपने आप तो पत्ते झड़ते हैं। नये पत्ते तो वृक्ष का प्राण रस पीकर पैदा होत है। वसंत यों नहीं आता। शीत और गरमी के बीज से जो जितना वसंत निकाल सके, निकाल ले। दो पार्टो के बीच में फॅसा है, देश का बसंत। पाट और आगे खिसक रहे हैं। वसंत को बचाना है तो जोर लगा कर दोनों पार्टो को पीछे ढकेलो-इधर शीत को, उधर गरमी को। तब बीच में से निकलेगा हमारा घायल वसंत।''[3]

समाज में फैली हुई इस संडाध की मूल वजह मात्र धन का असमान वितरण है और इसी मूल वजह ने मनुष्य को धनी और गरीब दो वर्गो में विभाजित कर दिया है। पूंजीवादी वर्ग का समर्थक सत्तारूढ़ दल है जो कभी प्रत्यक्ष और कभी अप्रत्यक्ष रूप से जनता का शोषण कर स्वयं की स्वार्थ सिद्धि करता है । इन सभी पूंजीपतियों पर परसाई ने करारे व्यंग्य किये है। ''मनुष्य दिन-भर भोजन बटोरता था और रात को खाकर चैन से सोता था। श्रम और भोग का यह संबंध इतना प्राकृत और स्पष्ट था कि कहीं कोई उलझन नहीं थी। परंतु एक दिन उस आदिम समाज के एक व्यक्ति के समाने बड़ी उलझन उपस्थिति हुई। वह रात को अपनी गुफा में सो रहा था कि उसे अचानक पास ही की गुफा से किसी साथी की कराह सुनायी दी वह उठा और उस गुफा में पहुँचा। तिरछे चॉद की किरणें गुफा में झॉककर एसे आलोकित कर रही थी। उसने देखा कि उसका वह पड़ोसी, जो दिन भर उसके साथ भोजन बटोरता रहा, अब पेट पर हाथ रखकर कराह रहा है। उसके मुख पर गहरी कालिमा छा गयी थी और नेत्रों से जल बह रहा है।''[4]

परसाई ने कबीर, गोर्की, चेखव, प्रेमचंद, निराला, लोर्को आदि से सीखा कि गरीब और अमीर अलग-अलग कौमें है, वर्ग है उनके अलग अलग सिद्धांत, हित, धर्म और लक्ष्य हैं । प्रभावी वर्ग अपने सिद्धांत और हित छीनकर उन्हें अपने भीतर समेटता है। उन्होंने जान लिया कि अपने देश में बढ़ते हुए मजदूरों के संगठित प्रभाव के कारण सामंती- पूंजीवादी गठजोड़ की संस्कृति आज राष्ट्रीय सेवक संघ है। यह उस वर्ग की प्रतीक संस्था है। परसाई जी ने लगातार इस संगठन के खिलाफ लिखा है। इसका कारण यही है कि वे अपनी कलम का सांप्रदायिक एवं जातीय शक्तियों के खिलाफ उपयोग करते रहे है। वर्ग शत्रुता की पहचान परसाई को बेहद बारीकी से है। वे हमेशा सजग रहे हैं। मुक्तिबोध की तरह वे भी निरन्तर अपने चारों ओर दुश्मन का

जाल देखते है। हर समय दुश्मन ऑखों के सामने नाचता है । विशेषता है कि मुक्तिबोध और परसाई दोनों ने असुरक्षा की ग्रंथि को निजता से उबारकर रचनात्मक रूपांतर किया है। रचनात्मक रूपांतरण न होता तो वर्ग दृष्टि ही क्यों प्रमाणित होती। दोनों लेखकों का वर्ग चरित और जिंदगी के संघर्ष के आयाम लगभग मिलते-जुलते हैं। दोनों ने एक ही काम किया है। सूक्ष्म से सूक्ष्म सामाजिक विकृति भी परसाई की नजर से नहीं बच पाई है। पूंजीवादी प्रतिष्ठानों के हिमायती समाजवादी ढांचे की राजनीत में जिस भाषा का व्यवहार करते हैं उसकी पोल खोलने में परसाई की सीधी दिलचस्पी है ''सोने की सांप'' में से पंक्तियां परसाई की ..... क्षमता का उदाहरण कही जा सकती है - गढ़े सोने में बड़ी उलझन है। एक उसका रखवाला सांप होता है। फिर वही दृष्टि, दयालुता, भलाई और धार्मिकता का स्वरूप धारण किये रहता है वह मारा नहीं जाता और अगर उसे मीठे स्वरों में फुसलाओ तो वह भाग जाता है और सोना साथ ले जाता है।''[5] राष्ट्रीय विकास पूंजीवाद के दायरे में हो रहा है राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग एक ओर तो भारी उद्योगों, सार्वजनिक क्षेत्र तथा कृषि के विकास पर जोर देते हुये तेजी से औद्योगीकरण के द्वारा इस आर्थिक पिछड़नेपन को खत्म करने का प्रयत्न करता है तो उपनिवेशवाद से विरासत में मिलता है किंतु दूसरी ओर यह अर्थतंत्र पर अपना शिकंजा मजबूत करता है और राष्ट्र द्वारा उत्पादित सम्पत्ति का अधिकतम भाग हड़प लेता है।[6] इस तरह कहा जा सकता है कि भारतीय स्वतंत्रता का इतने वर्षो का इतिहास इस बात का साक्षी है कि अंग्रेजी साम्राज्यवाद द्वारा विध्वंश भारतीय व्यवस्था को सुव्यवस्थित करने के लिए कुछ भी नहीं किया भारतीय जनता का शोषण अब तक साम्राज्यवाद द्वारा आया सामंतवाद और पूंजीवाद है।

हरिशंकर परसाई की प्रतिमा हिन्दी व्यंग्य के क्षेत्र में अद्वितीय है। वर्तमान जीवन की सड़ांध, विरूपता, विसंगति जीवन के प्रति आस्था इनके व्यंग्य के प्रधान विषय है। व्यंग्य लेखकों की पंक्ति में जिन लोगों ने विशिष्ट स्थान बना लिया है उनमें हरिशंकर परसाई, श्रीलाल शुक्ला, रवीन्द्र त्यागी, शरद जोशी, अमृत लाल नागर, कृशन चन्दर, रमेश उपाध्याय, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

परसाई ने मध्यमवर्गीय कुसंस्कारों, ढोंग, दोहरे मानदंडों, झूठी शान, प्रतिष्ठता आदि को अपनी मारक भाषा द्वारा बुरी तरह लहुलुहान किया है तथा आम आदमी को चेताने का भी कार्य किया है हरिशंकर परसाई की रचनाओं में वर्गीय चेतना भी स्पष्ट रूप से देखी जाती है। हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य को शैशव से प्रौढ़ावस्था पर पहुंचाया है।

सन्दर्भ -

1. परसाई, हरिशंकर, सदाचार का तावीज, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन 2004
2. परसाईहरिशंकर, पगडंडियों का जमाना, प्रकाशन राजकमल प्रकाशन 2018
3. परसाई, केदर, भारतीस चिंतन परम्परा, अनुप्रजी श्रीधरन, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि. नई दिल्ली
4. परसाई, हरिशंकर, तिरछी रेखाएं- घायल वंसत, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली
5. प्रसाद, कमला, परसाई रचनावली खंड पगडंडियों का जमाना
6. परसाई, रचनावली खंड 2 पहला पापी, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली पटना